P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-9*(Part-1) May- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

जाम्भो जी का सामाजिक दर्शन : 1451–1536 ईस्वी

महेश कुमार दायमा
सहायक आचार्य,
इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश

भारतीय इतिहास में उनका व्यक्तित्व और कृतित्त्व अप्रतिम है। मरू प्रदेश की विषम व जटिल परिस्थितियों में अवतरित जाम्भोजी की समाज सुधार सम्बन्धी देन अविस्मरणीय है। जाम्भोजी प्रथम ऐतिहासिक सुधारवादी थे जिन्होंने समाज में व्याप्त कुरीतियों और कुप्रथाओं, पाखंड, जीवहत्या एवं अन्य सामाजिक शोषण का ड़टकर विरोध किया। जाम्भोजी ने अपनी सबदवाणी द्वारा जीवन को कर्मकाण्डों से मुक्त कर, उसकी असीम सम्भावनाओं तथा आशामय विश्वास की स्थापना की है। उनके द्वारा ही सर्वप्रथम जीवन में भक्ति एवं श्रम की उपयोगिता एवं व्यावहारिकता की प्रतिष्ठा की गई। उनकी सबदवाणी में आत्मदर्शन एवं जगदर्शन का समन्वय है। जाम्भोजी ने पर्यावरण प्रेम तथा अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा समाज के खेतिहर लोगों में आत्म सम्मान जागृत कर एक नई आशा व विश्वास की किरण पैदा की।

मुख्य शब्द : सबदवाणी (जम्भवाणी), पाहल, मुकाम, विष्णोई (बिश्नोई), खेजड़ी, करड़, उलबंग।

प्रस्तावना

विश्व के सभी धर्मों का मूल उद्देश्य ईश्वर के विषय में ज्ञान प्राप्त करना है। अनुभव तथा दृष्टिकोण में विभिन्नता के कारण, एक ही ईश्वर को सगुण, निर्गुण, साकार तथा निराकार कहा गया है। सभी धर्मों व सम्प्रदायों का अपना–अपना दर्शन है। मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन से जाम्भोजी अवश्य प्रभावित हुये होंगे क्योंकि सम्पूर्ण भारतवर्ष में भक्तिरस की बयार बह रही थी, जिससे जाम्भोजी ने स्वयं की भक्ति भावना और उपासना पद्धति का प्रार्दुभाव करके एक नवीन विष्णोई (बिश्नोई) पंथ की स्थापना की। विष्णोई पंथ के संस्थापक गुरू जाम्भोजी मध्यकालीन पश्चिमी राजपूताना में सामाजिक विषमता के विरूद्ध जागृति व चेतना उत्पन्न करने वाले प्रथम वाणीकार और सगुणो–मुख निर्गुण भक्ति के प्रस्थापक थे। उनकी वाणी ''सबदवाणी या शब्दवाणी या जम्भवाणी'' के नाम से विख्यात है। विष्णोई पंथ में इसे पाँचवा वेद भी माना जाता है। रेगिस्तानी क्षेत्र तथा अकाल जनित परिस्थितयों का प्रभाव विष्णोई सम्प्रदाय पर पड़ा इसलिए इस सम्प्रदाय में ज्ञान नहीं बल्कि भावावेश का समावेश हो गया।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र में जाम्भोजी के सामाजिक दर्शन की व्याख्या, उसकी उपयोगिता तथा तत्कालीन समाज में व्याप्त आडम्बरों की आलोचना कर, उसकी समाज पर पड़ने वाले प्रभावों से अवगत कराना तथा वर्तमान में जाम्भोजी के सामाजिक दर्शन की प्रासंगिकता का अध्ययन करना। जाम्भोजी के सामाजिक दर्शन ने विष्णोई पंथ पर पर्यावरण संरक्षण के लिए किस प्रकार बलिदान देने के लिए प्रेरित किया, अध्ययन किया जायेगा।

गुरु जाम्भो जी का जन्म तथा विष्णोई सम्प्रदाय का उद्भव

विष्णोई (बिश्नोई) सम्प्रदाय के संस्थापक गुरू जाम्भोजी (जम्भेश्वर जी) का जन्म हिन्दू कैलेण्डर के अनुसार भाद्रपद अष्टमी विक्रम सम्वत् 1508 सोमवार सन् 1451 ईस्वी में राजस्थान के नागौर जिला मुख्यालय से 45 किलोमीटर उत्तर दिशा में स्थित ग्राम ''पीपासर'' के राजपूत पंवार वंश में हुआ था। इनके पिता का नाम लोहट जी तथा माता का नाम हंसा देवी था। जाम्भोजी ने कार्तिक मास की कृष्ण अष्टमी, विक्रम सम्वत् 1542 सन् 1485 ईस्वी को ''समराथल'' (बीकानेर) में विष्णोई पंथ का प्रवर्तन किया। विष्णोई सम्प्रदाय के स्थापना के समय जाम्भोजी ने कलश स्थापना एवं यज्ञ के बाद जल को अभियत्रित करके ''पाहल'' बनाया था। इसी पवित्र जल पाहल को पिलाकर विष्णोई (बिश्नोई) पंथ में लोगों को शामिल किया जाता है। सर्वप्रथम गुरु जाम्भोजी के चाचा पुल्होजी ने इस पंथ की दीक्षा प्राप्त की। इस सम्प्रदाय के सफल व सुचारु संचालन–संपादन के लिए जाम्भोजी ने उन्नतीस नियमों की एक आदर्श आचार संहिता बनाई जिसका पालन करने वाले विष्णोई कहलाये। बीस जमा नौ, उन्नतीस अर्थात विष्णोई।

विक्रम सम्वत् 1593 की मार्गशीर्ष बदि नवमी सन् 1536 ईस्वी को समराथल (बीकानेर से 17 किलोमीटर दूर पूर्व दिशा में स्थित है) में इनका बैकुण्ठवास हो गया तथा ''तालवा'' नामक गाँव के समिप इन्हें समाधिस्थ किया गया। यह स्थान वर्तमान में ''मुकाम'' कहलाता है। यहीं पर जाम्भोजी का समाधि मंदिर बना हुआ है। जाम्भोजी की मृत्यु पश्चात् सन् 1616 ई. पश्चात् विष्णोई सम्प्रदाय में ''पाहल'' पिलाकर पंथ में शामिल करने की परंपरा बंद कर दी गई, इसलिए इस सम्प्रदाय में विष्णोई समाज के लोग परंपरागत है। जाम्भोजी ने आजीवन ब्रह्मचारी रहने का संकल्प कर लिया था। जाम्भोजी द्वारा दिये गये ज्ञानोपदेश ''सबदवाणी'' शब्दवाणी, जम्भवाणी नामक रचना संग्रह के अंतर्गत संगृहित है। ठेठ मरुभाषा में जांभोजी की वाणी मुखरित हुई उनकी 'सबदवाणी' सही अर्थों में जीवंत साहित्य है। सबदवाणी राजस्थानी साहित्य, धर्म, संस्कृति और विचारों के क्षेत्र में नये आयाम, मापदण्ड और भूमिका प्रस्तुत करती है। विष्णोई सम्प्रदाय, उत्तरी भारत का पहला धार्मिक सम्प्रदाय है और सबदवाणी उसका मूलाधार है। जाम्भोजी ने अधिकतर जाटों को ही विष्णोई सम्प्रदाय में दीक्षित किया था, जाटों के अतिरिक्त ब्राह्मण, वैश्य, राजपूत चौहान, पंवार, गायणा, भाट, मुसलमानों को दीक्षित करके हिन्दू समाज की प्रशंसनीय सेवा की। उन्होंने जाति–भेद की भावना का परित्याग करके ''मानहु एक भगत कै नाता'' का दृष्टिकोण अपनाया। ये बाह्य आडम्बर तथा संस्कारों के विरोधी थे। विष्णु भक्ति पर जाम्भोजी ने बहुत जोर दिया।

जाम्भो जी का सामाजिक दर्शन

सबदवाणी से विदित होता है कि जांभोजी ने जीवन में सादगी, शौच व कर्मठता पर विशेष बल दिया तथा धार्मिक आडम्बरों एवं जातिगत भेदभाव का विरोध किया। कर्म प्रधान जीवन का उपदेश देते हुए आत्मज्ञान एवं लोकमंगल का मार्ग प्रशस्त किया तथा मनुष्य को केन्द्र में रखकर उसके उत्थान की चर्चा की। जाम्भोजी ने ज्ञान, भक्ति, एवं कर्म जैसे गूढ़ विषयों का प्रतिपादन स्वाभाविक, मौलिक एवं व्यवहारिक ढंग से किया। जाम्भोजी ने राजस्थानी भाषा का प्रयोग उपदेश देने के लिए ही नहीं वरन् व्यक्ति के नैतिक उत्थान के लिए प्रयोग किया, जिसकी वजह से शबदवाणी, स्वतः ही काव्यमयी, मंगलकारी, प्रवाहयुक्त एवं जनभाषा में प्रयुक्त होने के कारण अनुयायियों की कंठाहार बन गई। जाम्भोजी के मृत्युपरांत उनके उपदेशों को लिपिबद्ध किया जो कालांतर में जम्भवाणी या सबदवाणी या शब्दवाणी कहलायी। जाम्भोजी ने अपनी ओजस्वी वाणी में तत्कालीन समाज में व्याप्त अनेक कुरीतियों की आलोचना की तथा हिन्दू–मुसलमानों में व्याप्त पाखंडों के प्रति, अति सम्मोहन की निन्दा की। साम्प्रदायिकता, बहुदेववाद, मूर्तिपूजा तीर्थयात्रा, व्रत–उपवास, पुरोहितवाद, जीवहत्या आदि समाज में व्याप्त कुरीतियों को त्याज्य बताया और इन्हें मानव के उत्थान व प्रगति में सबसे बड़ी रुकावट कहा।

जाति व्यवस्था

जाम्भोजी एक महान समाज सुधारक थे। हिन्दू समाज की जाति व्यवस्था ने समाज को विभिन्न वर्गों में विभाजित कर रखा था। निम्न जातियों पर उच्च वर्ग के घोर अत्याचार ने समाज में संघर्ष की विभिन्न परिस्थितियाँ कर रखी थी। हिन्दुओं में अनेक जातियाँ व उप जातियाँ थी, जिनमें एक दूसरे के प्रति ऊँच–नीच, छुआछूत का भेदभाव था। जाम्भोजी ने इन रूढ़िगत मान्यताओं एवं जाति व्यवस्था की भर्त्सना करते हुये कहा –

उत्तम कुली का उत्तम न होयबा
कारण किरिया सारूं[1]।

अर्थात् उत्तम कुल में जन्म पाकर के शास्त्र विहित धर्म का पालन नहीं करता, वह व्यक्ति बड़ा नहीं कहलाता, मुक्ति में केवल जाति, कारण नहीं है। उत्तम गुण तथा क्रिया ही कारण है। जाम्भोजी द्वारा प्रवर्तित विष्णोई धर्म में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, जाट, मुसलमान आदि सभी जाति समूह प्रविष्ट हुए। हवन के बाद पवित्र जल जिसे 'पाहल' कहते है, पीकर तथा विष्णोई धर्म के नियमों में आस्था प्रकट कर कोई भी विष्णोई बन सकता है। विष्णोई माता–पिता का बच्चा भी जन्म से विष्णोई नहीं होता है। उसे विष्णोई बनाया जाता हैं। जन्म के इक्कतीसवें दिन बच्चे के मुँह में पवित्र पाहल दिया जाता है तथा कानों से भी छुआया जाता है, ऐसा करते समय ''बालक मंत्र'' भी बच्चे के कान में पढ़ा जाता है –

''जल से न्हाया त्याग्या मल, विष्णु नाम सदा निरमल
विष्णु मन्त्र कान जल छुवा।।
श्री जाम्भेश्वर भगवान की कृपा से विष्णोई हुआ।''[2]

जाम्भोजी के प्रमुख शिष्य रेड़ा जी (विक्रम संवत् 1530–1620) के कथन से भी विदित होता है कि जाम्भोजी जातिगत रूढ़ियों के विरोधी थे और सभी को समान समझते थे –

जाम्भोजी ने पन्थ चलाया, सन्मार्ग सबको दिखलाया।
शाख सूत्र सबको उतराये, देख दशा ब्राह्मण घबराये।।
जाति भेद दूर भगाया, अद्भुद सन्मार्ग खूब दिखाया
ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य मुड़ाये सत्य गुरू के शरण आये।

जाम्भोजी ने कहा है कि किसी जाति विशेष में जन्म लेने से कोई श्रेष्ठ नहीं हो जाता –

''उतपति हिंदू जरणा जोगी
किरिया ब्राह्मण दिल दरवेसां।।
उन मुन मुल्ला अकल मिसलमानी,[3]

अर्थात् हिन्दू लोग जन्म से स्वयं को श्रेष्ठ समझते हैं यद्यपि उत्पत्ति से श्रेष्ठता का कोई प्राकृतिक सम्बन्ध नहीं है, सभी लोग वैसे ही उत्पन्न होते है, जैसे कि हिन्दू। जाम्भोजी कहते हैं –

''दीन गुमान करैलो खाली।
ज्यौं कण घातै, घुण हाणी।।[4]

अर्थात् जिस प्रकार घुन दाने को अन्दर से खोखला कर देता है, उसी प्रकार यदि, मनुष्य भी ईश्वर की साधना को छोड़कर स्वयं को बड़ी जाति, कुल या धर्म का बतलाकर अहंकार करे तो, वह अहंकार उसे पतन की ओर अग्रसर करेगा। जाम्भोजी ने प्रत्येक जाति, वर्ग, वर्ण, पंथ के समस्त स्त्री, पुरुष को आत्मोत्थान का मार्ग प्रशस्त किया एवं निम्न वर्ण के लोगों को समाज में सम्मान दिलाया, जो कि जाम्भोजी की सबसे बड़ी देन है।

जतियां सतियां सोपियां जोगी दरवेसां,
मुसलमाणा हिंदवा, तू पूरै आसा।।
आलमियां अरदासि करि गावै गुण निधान।

मध्यमा ता उतिम किया, अई तमिणा दान।।
– संत हरजस

हिन्दू–मुस्लिम सम्बन्ध

जाम्भोजी ने मायावाद व ज्ञानवाद को अस्वीकार करके मानव एकता पर बल दिया जिसे 'अद्वैतवाद' कहा गया, जो कि अन्य दार्शनिकों के अद्वैतवाद से भिन्न है क्योंकि यह सर्ववाद का पोषक होने के कारण हिन्दू–मुस्लिम एकता का प्रतीक है। जाम्भोजी ने ब्रह्म (ईश्वर) या अल्लाह में कोई भेद नहीं किया तथा इसे सर्वगुण सम्पन्न, स्वयं ज्योति स्वरूप, सच्चिदानन्द तथा सम्पूर्ण चराचर का नियंता बताया तथा कहा कि जो स्वरूप ईश्वर का है वही अल्लाह का है।[5]

अल्लाह अलेख अडाल अजोनि सिंभू।

अर्थात् अल्लाह अदृश्य है। उसका ज्ञान पाँच ज्ञानेन्द्रियों से परे है। वह ज्ञानेन्द्रियों के विषय क्षेत्र (शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गंध) से परे हैं। अडाल अर्थात् अखंड़ है। उसके माता–पिता नहीं हैं, वह स्वयंभू है। निराकार ईश्वर का यही स्वरूप भारतीय दर्शन में वर्णित है। इसी रूप की पुष्टि जाम्भोजी ने की है। सबदवाणी के प्रसंगों से ज्ञात होता है कि मुसलमान भी जाम्भोजी से प्रभावित थे। एक प्रसंग से विदित होता है कि एक बार राव लूणकरण ने एक पंडित को तथा मुहम्मद खाँ सूबेदार नागौरी ने एक काजी को जांभोजी के पास यह जानने के लिए भेजा कि जाम्भोजी हिन्दुओं के संत है या मुसलमानों के पीर। जाम्भोजी ने दोनों को उत्तर दिया कि, वह दोनों में से किसी के नहीं है।[6] वे तो सच्चे हिन्दू के देव एवं सच्चे मुसलमान के पीर हैं। मुहम्मद खाँ सूबेदार नागौरी, कर्नाटक के नवाब शेख सद्दो तथा मुल्ला सधारी भी इनसे प्रभावित थे। मुल्ला सधारी के प्रति जांभोजी ने दो सबद (संख्या 113 व 115) कहे हैं।

मुल्ला सिधारी यो कहै मुहमद ही फरमान।
रोजे रखै नमाज पढ़, बदगी करै सवात इमान।।[7]

जाम्भोजी ने शेख सद्दो से गौ हत्या बंद करवायी थी –

''शेख सद्द परचाइयो गउ छुड़ाई देव।
सत गुरु शब्द उचारियो तिसी समय का भेद।।[8]

हिन्दू–मुस्लिम एकता पर जाम्भोजी के शिष्यों ने भी बल दिया है। इसकी सुन्दर अभिव्यक्ति संत सुरजनजी (विक्रम संवत 1640–1742) की रचनाओं में मिलती है –

पथरदेव देहरा पथर कलस बनाया।
पूरब पीठि पछम दिस सिरदा हिन्दू धर्म गुमाया
हिन्दू तुरक का एको सांई सब भी मन का जीया।

इस प्रकार जाम्भोजी ने हिन्दू एवं मुसलमान दोनों को ही एक समान दृष्टि से देखा तथा उनमें एकता स्थापित करने का प्रयास किया।

बाह्य आडम्बरों की आलोचना

जाम्भोजी ने हिन्दू–मुस्लिम समाज में प्रचलित पाखंडो, आडम्बरों के लिए पंडितों, काजियों, मुल्लाओं की आलोचना की है। मुस्लिम धर्म में खुदा के नाम पर मक्का–मदीना की तीर्थ यात्रा करना, मस्जिद में जाना, दिन में पाँच बार नमाज पढ़ना, जीव हत्या करना आदि कई पाखण्ड़ प्रचलित थे। मुस्लिम पाखंड के विषय में जाम्भोजी ने कहा कि जो व्यक्ति खुदा को नहीं जानता, गायों की हत्या करता है, पश्चिम की ओर मुँह करके उलबंग तो देता है, पर मन में दया भाव नहीं रखता, वह मुसलमान नहीं हो सकता।

दिल साबत हज काबो नेड़ै
क्या उलबंग पुकारो
भाई नाऊं बलद पियारो
ताके गले करद क्यूं सारो[9]

यदि हमारा हृदय पवित्र है तो उलबंग देने की आवश्यकता नहीं है।

सुणरे काजी सुणरे मुल्लां
सुणरे बकर कसाई[10]

पशु का दूध पीना तो सही है लेकिन उसे मारकर हीन कर्म करके, नमाज पढ़ना व्यर्थ है।

विणि परच वाद निवाज गुजारों।[11]

नीच कर्म करके, नमाज पढ़ना व्यर्थ है क्यों कि खुदा की इबादत तो सभी का भला करने का संदेश देती है।

सुन्नत करवाने से भी कोई लाभ नहीं है। केवल मुहम्मद–मुहम्मद कहना बेकार है क्यों कि मुहम्मद तो हलाली पुरुष था, मुर्दा खाने वाले नीच पुरुष होते हैं।

महमद महमद न करि काजी,
महमद का तो विषम विचारुं।
महमद हाथ करद जो होती,
लोहे घड़ी न सारुं।।
महमद साथ पयंबर सीधा,
एक लाख असी हजारुं
महमद मरद हलाली होता,
तुम भी भए मुरदारुं।।[12]

जाम्भोजी कहते हैं कि यदि व्यक्ति का हृदय साफ है, इसमें राग–द्वेष नहीं है, तो मक्का–मदीना के लिए हज की यात्रा करना आवश्यक नहीं है। हज एवं काबे का वास व्यक्ति के हृदय में है। उन्होंने मुसलमानों को कहा कि तुम क्यों जोर–जोर से अजान लगाते हो, यह तो व्यर्थ का दिखावा है। खुदा का घर तो सच्चे मुसलमान के हृदय में होता है। गाय हत्या को अनुचित बताया तथा गाय, हत्या करने के लिए होती तो, करीम गाय को क्यों चराता ?

चडि–चडि भीते मड़ी मसीते क्यूं उलबंग पुकारो ?
काहे काज गऊ बिणासो
तो करीम गऊ क्यों चारी ?[13]

इस प्रकार जाम्भोजी ने मुस्लिम धर्म में प्रचलित कुरीतियों के प्रति मुसलमानों को आगाह किया तथा कुरान व नमाज आदि का सही अर्थ उन्हें समझाया।

हिन्दू धर्म में मूर्ति पूजा का खण्डन किया तथा विष्णु को देवतुल्य व पूजनीय कहा। देवी–देवताओं की मूर्ति पूजा को व्यर्थ बताते हुये कहा –

हर पर हरि की आण न मानी,
रे भोला भूलि न जपी महमाई।
पाहण प्रीति पिटा करि प्राणी,
गुर विणि मुकति न जाई।।

मूर्ति–पूजा एवं उससे संबंधित किये गये पाखण्डों में भगवान का वास नहीं है। ऐसी पूजा–अर्चना करने वाले ब्राह्मणों से तो कुत्ते अच्छे हैं जो चोर के आने पर घरवालों

को भौंक कर जगा देते हैं। भूत–प्रेत, यज्ञ–हवन, मुक्ति मार्ग हेतु साधना व्यर्थ है। शमशान घाट में नदी तट पर ईच्छा प्राप्ति हेतु पूजा साधना से सिद्धि प्राप्त नहीं होती –

धवणा धूजै पाहण पूजे, बे फरमाई खुदाई
गुरू चेलै के पाए लागै, देखो लोग अन्याई ...
ब्राह्मण नाऊं लादण रूडा, बता नाऊं कूत्ता
वै अपहां नै पोह बतावै, बैरे जगावै सूता ...
मड़े मसाणै, तड़े तड़ंगे, पडे पखाणे, हांतो सिद्ध न काई।
निज पोह खोज पिराणी, जे नर दावो छोड़्यो मेर चुकाई
राह तेतीसों की जांगीण।।[14]

जाम्भोजी ने बाहरी दिखावे, सिद्धि दिखाने वाले, चमत्कार करने वाले को कलाबाज कहा। नंगे रहने, वस्त्र त्यागने, शरीर को कष्ट देने से ईश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती है।

ताथ नागे जोग न पायो।[15]

वे व्यक्ति जो पूजा, यज्ञ, अर्चना के लिए पशुबलि देते हैं या जीविका चलाने के लिए जीव हत्या करते हैं वे भी भ्रम में है।

नागड भागड भूला महियल।
जीव हत मड खाईलो।।[16]

निर्दोष जीव की हत्या करने से भगवान प्रसन्न नहीं होते, योगासन, विभिन्न मुद्राओं में आसन लगाकर कपट, झूठ, बेईमानी का आश्रम लेने वाला जोगी या योगी नहीं हो सकता।

सरल–निश्चल मार्ग पर विरला व्यक्ति ही चल सकता है।

आसण बैसण कूड कपट
को को को चीन्हत अवजू वाट
अवजू वाटे जे नर भया
काची काया छोडि कवलासे गया।[17]

सिद्धी प्रदर्शन, गेरुए रंग की वेशभूषा धारण करना, ललाट पर तिलक–छापा लगाना, जटा बढ़ाना, माला पहने–जपने से तथा बनावटी क्रियाओं से योग नहीं हो सकता।

जोगी जंगम, नाथ दिगम्बर, सन्यासी, ब्राह्मण, ब्रह्मचारी मनहठ पढ़िया पण्डित
काजी मुल्ला खैलैं आप दुवारी।
निश्चय कायूं बांयों होयसै, जे गुरु विणि खेल पसारी।[18]

कान फड़वाना, चिरघट पहनना, जटा बढ़ाये रखना, जीवहत्या करना निरा पाखंड है –

थे कान चिरावो चिरघट पहरो,
पाखंड पोह न कोई
जटा वधारो जीव सिंघारो,
आयसां इहां पाखंड जोग न होई।[19]

जोग, मार्ग को पूरी तरह से जाने बिना घर छोड़ देना, फिर किसी गृहस्थ व्यक्ति की तरह सुई धागे से ''करड़'' व ''मेखला'', की सिलाई करना, झोली, कथा लेकर कंधे पर बोझ ढोना, वीर–वेतालों का जप करना, सिर मूंडवाना किन्तु मोह–माया का त्याग नहीं करना, केवल लोक दिखावा है –

खरतर झोली खरतर कंथा, कांध सहै दुख भाँरु
जोग तणी थे खबर न पाई, कांय तज्या घरबारूं ...
आयसां डंडत डंडू मुंडत मुडूं, मुंडत माया मोह किसूं।[20]

मूल बात तो परमब्रह्म की सुधि लेना तथा तद् हेतु सदाचरण ही योगी का कर्त्तव्य है।

दोय मन दोय दिल सीवी न कंथा ...
पारब्रह्म की सुधि न जांणी, तो नागे जोग पाया।[21]

इन कथनों को नहीं समझने वाले सिर मूंडवा लेते हैं तथा गुरु–शिष्य दोनों पागल कुत्ते के समान हो जाते हैं –

टूका पाया मगर मचाया, ज्यों हडियाया कुत्ता
जोग जुगत की सार न जाणी, मूंड मुंडाया बिगूता
चेला गुरु अपरचै खीणा मरता मोक्ष न पायो।[22]

बिना गुरु ज्ञान के तत्त्व प्राप्ति हेतु जोगी, जंगम, सींगी बजाने वाले, दिगम्बरी सन्यासी, ब्राह्मण ब्रह्मचारी व पढ़े–लिखे पंडितों के प्रयास व्यर्थ है। ऐसे लोग अहंकारी है। तीर्थों पर भटकना, तीर्थों की यात्रा करना मृगमरीचिका है।

अठसठि तीरथ हिरदै भीतर, बाहरी लोकाचारू।

बाहरी दिखावा करके किया जाने वाले सभी कर्म एवं आचरणहीनता किसी भी प्रकार से मोक्ष या मुक्ति मार्ग में सहायक नहीं है।

गऊ कोट जे तीरथां दानों, बोहत किया आचारुं।

जाम्भोजी ने अपने अनुयायियों को ढोंगियों, पाखंडियों द्वारा किये जाने वाले आडम्बरों, पाखंडो से सावधान किया। जाम्भोजी के उपदेशों व प्रयास से विष्णोई सम्प्रदाय आडम्बर रहित रूप में वर्तमान में प्रचलित है।

अस्पृश्यता

जाम्भोजी ने समस्त मानव को एक समान मानते हुये अस्पृश्यता की निंदा की तथा समस्त मानवों को ईश्वर की संतान माना। इसलिए मानव– मानव में भेद का विरोध किया।

तइया सासूं तइया मासूं, तइया देह दमोई
उतिम मधिम क्यों जाणीजै विवरसि देखो लोई।[23]

जाम्भोजी अस्पृश्यता का विरोध करते हुये कहते हैं, समस्त मनुष्यों में एक समान श्वास, मांस, देह, प्राण है तो यह भेद दृष्टि क्यों रखते हो? जो व्यक्ति संशय, भूल में डूबा हुआ है, जिसके हृदय की शांति नष्ट हो गयी है, उसी के हृदय में ऊँच–नीच के भाव विद्यमान है। जिस व्यक्ति के मन में वाद–विवाद की प्रवृत्ति, अशांति, संशय की भावना एवं उलझन, भ्रम दूर हो गये हैं, उस व्यक्ति के हृदय में ऊँच–नीच की भावना व भेद दृष्टि बिल्कुल नहीं है।

जाम्भोजी ने कहा कि मनुष्य जन्म से नहीं बल्कि कर्म से चंडाल होता है।

दाणवे दूतवा, दाणवे भूतवा, राकसा बोकसा
जाका जलम नहीं परि कर्म चंडालू।[24]

जो मनुष्य दुष्ट, कुपात्र, मलिन एवं वर्ण संकर है, वही मनुष्य नीच, चंडाल है। उत्तम कुल–वर्ण में जन्म लेने से मनुष्य उत्तम नहीं हो जाता, मनुष्य उत्तम अपने कर्मों से होता है –

उतिम कुली का उतिम न कहिबा कारण किरिया सांरू।[25]

नारी के प्रति सुधारवादी दृष्टिकोण

मुस्लिम शासनकाल में नारी का सम्मान समाप्त हो गया था, उन्हें सारे अधिकारों से वंचित कर, गृह परिचर्या में ही संतोष करना पड़ता था, जाम्भोजी ने

हिन्दू जाति में उपेक्षित नारी गौरव को पुनः प्रतिष्ठित करने की चेष्ठा की। जांभोजी ने नारी को पुरुषों के समान महत्त्वपूर्ण बताया। नारी को समाज में समुचित स्थान दिलाने के लिए गृहस्थ जीवन को महत्त्व प्रदान किया। एक प्रसंग विशेष में जाम्भोजी ने लक्ष्मणनाथ को समझाते हुए कहते हैं –

तइया सांसूं तइया मांसूं, तइया देह दमोई
उत्तम मध्यम क्यों जाणीजे, बिबरस देखो लोई।।[26]

जांभोजी ने कहा कि केवल स्त्री जाति का मुख नहीं देखने से भगवान की प्राप्ति हो जाती है, अनुचित विचार है। मानव की मुक्ति, साधना करते–करते उस मुकाम पर पहुँच जाये, जहाँ उसे स्त्री व पुरुष में भेद ही न दिखे। स्त्री–पुरुष दोनों में ही पूर्ण परमात्मा का चैतन्य स्वरुप विद्यमान है।

स्त्री को सम्मान व आदरणीय बताया। अतः उस पर हाथ उठाना धर्म विरूद्ध है।

कै तैं तिरिया शिर खडंग उभारया।[27]

जम्भोजी ने कहा कि पुरुष को अपने सामर्थ्य अनुसार अपनी स्त्री को वस्त्राभूषण देते रहना चाहिए।

गुरु का महत्त्व

जाम्भोजी की दृष्टि में गुरु का बहुत महत्त्व है। बिना गुरु की कृपा से कोई इस भवसागर को पार नहीं कर सकता है। गुरु ही मायारूपी जाल में फंसे, मानव को मुक्ति का मार्ग दिखाता है। गुरु ही ब्रह्म प्राप्ति में सहायक सिद्ध होता है।

गुरू न चीन्हू पंथ न पायो।
अहल गई जमवारूं।[28]

गुरू को जाने बिना सुपथ नहीं मिलता, गुरू के बिना जन्म व्यर्थ होता है। परमार्थ मार्ग में गुरू ही मूल तत्त्व है। केवल कथन मात्र से ही गुरू का महत्त्व नहीं बताया जा सकता है। व्यक्ति को सुख–दुःख अपने करनी के कारण ही मिलता है, जिसके कारण आत्मतत्त्व की उपलब्धि न होना है। गुरू की कृपा से ही आत्मोलाब्धि संभव है –

सतगुर मिलियो सत पथ ज पायो।[29]

गुरु उपदेश से अनेक राजाओं, भोगी पुरूषों, साधु–संतों और नाथों ने आत्म तत्त्व प्राप्त किया। जाम्भोजी ने कहा कि शिष्य बनने से पूर्व गुरु की पहचान कर लेनी चाहिए, ऐसे गुरु के लक्षण, जीवन शुद्ध, निष्पाप–निष्कलंक तथा सादा, निर्मल होना चाहिए। गुरु की कथनी–करनी में अन्तर नहीं होना चाहिए। उसका मन–वचन–कर्म सहज परक होना चाहिए व उसकी आत्मा अनहद नाद से गुंजायमान होनी चाहिए। जाम्भोजी गुरु के लक्षण बताते हुये कहते हैं कि गुरु संतोषी हो, दूसरों का पोषण करने वाला हो, उसे ही गुरु बनाना चाहिए। जो व्यक्ति तृष्णा से मुक्त नहीं है, जो काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि शत्रुओं के चुंगल में फंसा हो, वह गुरु बनाने लायक नहीं। वह तो स्वयं इस संसार रुपी बीहड़ जंगल के भयावह भ्रमजाल में भटक जायेगा।

गुरू चीन्हू गुरू चीन्ह पुरोहित
गुरू मुख धर्म बखांगी।
जो गुरू होयबा सहजै शीले शब्दे नादे वेदे .....
न रहिसी पाणी।[30]

अतः गुरु जीवमुक्त, कैवल्यज्ञानी व अन्नतगुणयुक्त एवं ''मेवो का मेवा'' होता है।

खोज प्राणी ऐसा बिनाणी, केवल ज्ञानी ज्ञान गहीरूं
जिहिं के गुणै न लाभत छैहूं,
गुरु गेंवर गरवा शीतल नीरुं मेवा ही अति मेऊं।
हिरदै मुक्ता कमल संतोषी, टेवा ही अत टेऊं
चड़ि करि बोहिथे भव जल पारि लंघावै।[31]

जीव हत्या

भारत में प्रचलित विभिन्न धर्मों, सम्प्रदायों में जीव हत्या की कड़ी निंदा की गई है और समस्त जीवों के प्रति मानवीय व्यवहार, दया करने का संदेश दिया गया है लेकिन अनादिकाल से मानव जीवों पर स्वयं की स्वार्थपूर्ति के लिए हिंसा करता आया है इसलिए जाम्भोजी ने अपने उपदेशों में, जो कालांतर में ''सबद'' में लिपिबद्ध हुये, जैन धर्म के उपरांत सबसे अधिक जोर अहिंसा पर दिया है। विष्णोई धर्म का सबसे महत्त्वपूर्ण पहलू जीवों की हत्या न करना और न ही करने देना। विष्णोई लोग जीवों, वृक्षों की रक्षार्थ प्राण व बलिदान देते आये हैं। विष्णोई समाज में जीव रक्षा की महत्ता व उपयोगिता, जाम्भोजी के अनेक सबदों की पंक्तियों में प्रस्फुटित होती है। वृक्षों में भी जीव विद्यमान होता है –

सोम अमावस आदितवारी
काय काटी वणरायौ ?[32]

जाम्भोजी ने समस्त जीवों की हत्या को अवैध करार देते हुये कहा –

काढ़े भाग करक दुहेली जायौ जीव न घाई।[33]

जीव हत्या में लिप्त लोगों को चेतावनी व सावधान करते हुये जाम्भोजी कहते हैं –

जीवां उपरिं जोर करीजै।
अति काल हुयसी भारी।।

जीव हत्या के समय, निर्दोष जीवों को होने वाली पीड़ा, वेदना, पर जाम्भोजी कहते हैं –

रे विनहीं गुन्हें जीव क्यूं मारो ?
थे तकि जाणों तकि पीड़ न जाणों।

जीव रक्षार्थ अपने प्राणों की आहुति देने की शिक्षा देते हुये जाम्भोजी कहते हैं –

ऊँ क्यूं भलो ज आप न मरियै।
क्यूं अवरां मारण धाइयै ?

गुरू जाम्भोजी द्वारा प्रतिपादित विष्णोई पंथ के लिए उन्नतीस नियम बनाये जिनका पालन विष्णोई पंथ के अनुयायी अक्षरतः करते आ रहे हैं। जीवों पर दया, हरे वृक्ष नहीं काटना, अहिंसा व सदाचार से संबंधित नियम विष्णोई सम्प्रदाय के लिए मील का पत्थर साबित हुये क्यों मरूस्थलीय क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों का अकाल–सूखे से घनिष्ठ सम्बन्ध है। अकाल–सूखे को सहने तथा विषम पारिस्थितक परिस्थिति में जीवन को सहज रूप से चलाना है तो पर्यावरण से मित्रवत व्यवहार करना होगा, इसलिए जाम्भोजी ने अपने विष्णोई पंथ के उन्नतीस नियमों में क्रमशः

जीव दया पालणी, रूंख लीला नहीं घावै।
(नियम 18 व 19)
अमर रखावै थाट, बैल बधिया न करवै।
(नियम 22 व 23)

जीवों पर दया करना, हरे वृक्षों को नहीं काटना, थाट अमर रखना, बैल को बंधिया न करना, के कठोर नियम बनाये हैं।

गुरु जाम्भोजी ने जीवों पर दया करने संबंधी अनेक शबद कहे। उन्होंने मुसलमानों को जीव दया का महत्त्व बताया। जाम्भोजी ने कहा, हे काजी, हे मुल्ला, हे बकरी मारने वाले कसाई, तुम किसकी पैदा की हुई बकरी, भेड़ और गाय मार रहे हो ? इन निरीह पशुओं की हत्या करके तुम किस स्वर्ग की आशा करते हो ? जो चर–फिर कर आती है, दूध देती है, उसके गले पर तुम करद मत चलाओ। तुम तो केवल तकना जानते हो, तुम बिना किसी गुनाह के जीवों को क्यों मारते हो ? जिस धर्म से जीवों की रक्षा होगी, उस धर्म से बहुत से कार्य सिद्ध होंगे।

गुरू जाम्भोजी ने हरे वृक्ष काटने के लिए मना किया, जो मरूस्थलीय क्षेत्र के पर्यावरण संतुलन को बनाये रखने में प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा हुआ है। ''सिर साटे रूख रहे तो भी सस्तो जाण'', नियम का अक्षरशः पालन करते हुये मंगलवार 21 सितम्बर 1730 ईस्वी के भद्रपद सूदी दशमी, विक्रम संवत 1787 को खेजड़ली गांव (तत्कालीन जोधपुर रियासत, वर्तमान में जोधपुर जिला) के 363 विष्णोईयों ने खेजड़ी वृक्ष की रक्षार्थ खेजड़ी वृक्ष से चिपक गये, जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के क्रूर सिपाहियों ने पेड़ सहित स्त्री–पुरुषों के सिर भी काट दिये। इस प्रकार विश्व इतिहास में वृक्ष के लिए 363 विष्णोई प्रथम बार शहीद हो गये। इस बलिदान में सर्वप्रथम अमृता देवी व उसकी तीन पुत्रियों ने अपने प्राण दिये।

गुरू फुरमाई खण्डाधार, अवसर आयो सारिये।
आंपणो जीवड़ो कबूल, पर जीव उबारिये।।

खेजड़ली गांव के नृशंक अत्याचार का वीभत्स वर्णन करते हुये कवि गोकुल कहते हैं –

सतरा सी सत्तासीये, दशमी मंगलवार,
भादव सुदि खड़्या, खरतर खंडाधार
कुण पोहोनी पण भेटसी, धर्म सऊं गुण धीज
वन राख्या विश्नोइयां, राठौड़ा री रीझ।

हरे वृक्ष नहीं काटने का पालन करते हुये, पेड़ों को कटने से बचाने हेतु अपने प्राण न्यौछावर करने की सर्वप्रथम घटना विक्रम सम्वत् 1661 सन् 1604 ईस्वी ज्येष्ठ सूदी दूज शनिवार को जोधपुर राज्य के गांव रामासड़ी में घटित हुई थी। रामासड़ी की श्रीमती करमां देवी व श्रीमती गौरा बिश्नोई ने वृक्षों की रक्षार्थ प्राण न्यौछावर कर दिये। विष्णोई पंथ के इतिहास में पेड़ों को बचाने के लिए बलिदान की यह प्रथम घटना मानी गई। तिलवासनी (जोधपुर) में खेजड़ी वृक्षों की रक्षार्थ खीवणी देवी, मोटाराम खोखर, नैतु देवी द्वारा सन् 1604 से 1616 ईस्वी के मध्य प्राणाहुति दी।

वील्हौजी संत कहते हैं –

धन्य तेरी ध्यान करमणि, सीझती साकौ कियो।

विष्णोई सम्प्रदाय के अतिरिक्त विश्व में शायद ऐसे दुर्लभ उदाहरण समाज के सामने नहीं होंगे जिसमें लोगों ने वृक्षों व जीवों की रक्षा करते हुये अपने प्राण उत्सर्ग कर दिये। भारतीय संस्कृति आदिकाल से पेड़–पौधों में जीवन की महत्ता को स्वीकार करती है। वनस्पति, वृक्षों व लताओं के प्रति प्रेम तथा साथ में पक्षियों एवं पशुओं के साथ भी प्रेम, भारतीय संस्कृति की विशेषताएं रही है। वनस्पति प्रेम व पशु प्रेम का अद्भुत संगम विष्णोई सम्प्रदाय में मिलता है। वन्य पशुओं एवं विशेषकर हरिणों के प्रति विष्णोईयों की भावना कितनी अधिक धर्ममय होती है, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि राजस्थान में विष्णोई बाहुल्य क्षेत्र में हरिण की रक्षा के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देना, विष्णोईयों के लिए आम बात है। उन्हें इस प्राणोत्सर्ग का पछतावा नहीं होता वरन् आत्मगौरव होता है। यही नहीं विष्णोई महिलाएं अपने एक स्तन से अपने बालक को दुग्धपान कराती है व दूसरी ओर हरिण के बच्चे को स्तन पान कराते आमतौर पर मिल जाती है, जैसा कि 10 मई 1978 ईस्वी को नाढ़ोडी गांव, फतेहाबाद, हरियाणा में श्रीमती रामीदेवी धर्मपत्नी श्री रामेश्वर दास धारणिया बिश्नोई ने शिकारियों से छिपकर आये हरिण के मरणासन्न बच्चे को अपने स्तनों का दूध, अपने दूध पीते बच्चे के साथ पिलाया।

निष्कर्ष

जाम्भोजी मध्यकालीन भारत के निर्गुण संत परम्परा के अग्रदूत थे। वे दादू दयाल, कबीर, नानक के अग्रणीय थे। इन्होंने समाज में व्याप्त ऊँच–नीच की भावनाओं पर प्रहार ही नहीं किया बल्कि चारित्रिक पवित्रता एवं मूलभूत मानवीय गुणों के पालन का उपदेश दिया। जाम्भोजी के सामाजिक दर्शन में सदैव सच्चाई, परोपकार, ईमानदारी, अहिंसा, पशु व पर्यावरण प्रेम, साम्प्रदायिक सद्भावना पर जोर दिया। किसी का हक मारना उनको इष्ट नहीं था। वे कथनी व करनी में एकरूपता चाहते थे। वे आडम्बरों से दूर व जातिगत बन्धनों से परे थे। उन्होंने कर्ममय जीवन का उपदेश देते हुए आत्मज्ञान व लोकमंगल का भाव दृढ़ किया, समाज को उसकी बुराइयों से अवगत कराकर तथा उन बुराइयों से छुटकारा पाने का उनका राजस्थानी भाषा में सद् परामर्श व प्रचार करके, संपूर्ण पश्चिमी राजपूताना की जनता में नवीन क्रांतिकारी चेतना जागृत करने में जाम्भोजी सफल हुये।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जाम्भोजी, विष्णोई सम्प्रदाय और साहित्य (जम्भवाणी के पाठ–सम्पादन सहित), भाग प्रथम, बी.आर. पब्लिकेशन्स, कलकत्ता, 1969, सबद 24:4, पृष्ठ संख्या 328.*
2. *आचार्य, स्वामी भागीरथदास, बिश्नोई धर्म प्रकाश, धर्मार्थ प्रकाशन, बीकानेर, 1979, पृष्ठ संख्या 11.*
3. *माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 5 : 9–11, पृष्ठ संख्या 309*
4. *माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 72:6–7, पृष्ठ संख्या 379.*
5. *संगोष्ठी वाणी (मासिक पत्रिका), अंक 2, जयपुर, अक्टूबर, 1978, पृष्ठ संख्या 9.*
6. *माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 6, पृष्ठ संख्या 309–310.*
7. *आचार्य, स्वामी भागीरथदास, बिश्नोई धर्म प्रकाश, धर्मार्थ प्रकाशन, बीकानेर, 1979, पृष्ठ संख्या 371.*
8. *आचार्य, स्वामी भागीरथदास, उपर्युक्त, पृष्ठ संख्या 357.*

9. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 8 : 1–4, पृष्ठ संख्या 311.
10. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 7 : 1, पृष्ठ संख्या 311.
11. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 9 : 10, पृष्ठ संख्या 313.
12. जम्भवाणी, सबद 10 : 1–4, पृष्ठ संख्या 314.
13. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 8 : 13–16, पृष्ठ संख्या 312.
14. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 71, पृष्ठ संख्या 378–379.
15. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 6 : 25, पृष्ठ संख्या 310.
16. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 14 : 11–12, पृष्ठ संख्या 320.
17. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 22 : 1–4, पृष्ठ संख्या 327.
18. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 45 : 6–11, पृष्ठ संख्या 349.
19. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 46 : 7–8, पृष्ठ संख्या 350.
20. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 47 : 1–6, पृष्ठ संख्या 350–351.
21. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 48 : 1–19, पृष्ठ संख्या 351–352.
22. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 118 : 1–3, पृष्ठ संख्या 415.
23. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 39 : 1–2, पृष्ठ संख्या 345.
24. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 113 : 5–6, पृष्ठ संख्या 412.
25. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 24 : 4, पृष्ठ संख्या 328.
26. आचार्य, स्वामी भागीरथदास, सबद 50 : 1–2, पृष्ठ संख्या 203.
27. आचार्य, स्वामी भागीरथदास, सबद 61 : 14, पृष्ठ संख्या 234.
28. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 11 : 4–5, पृष्ठ संख्या 315.
29. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 21 : 3, पृष्ठ संख्या 326.
30. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 1 : 1–22, पृष्ठ संख्या 303–304.
31. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 13 : 9–16, पृष्ठ संख्या 319.
32. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 6 : 3–4, पृष्ठ संख्या 309.
33. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जम्भवाणी, सबद 7 : 3, पृष्ठ संख्या 311.

सहायक ग्रन्थ सूची

1. माहेश्वरी, डॉ. हीरालाल, जाम्भोजी की सबदवाणी (मूल एवं टीका), बी.आर. पब्लिकेशन्स, कलकत्ता, 1976.
2. स्वामी सच्चिदानन्द, श्री जम्भगीता, होशंगाबाद, 1985 ईस्वी।
3. रामदास, श्री जम्भसार साखी संग्रह, जोधपुर, 2000 ईस्वी।
4. विवेकानन्द, जांभाणी साखी संग्रह, बीकानेर, 1978 ईस्वी।
5. वर्मा, रामलाल, श्री जम्भभगवान प्रगति, सरदारमल आत्माराम प्रकाशन, जोधपुर, 1995 ईस्वी।